

हिन्दी उपन्यासों के आधार पर किन्नरों की आर्थिक स्थिति

अमिता टेटे & डॉ. महेन्द्र कुमार वर्मा
अतिथि प्रवक्ता, हिन्दी विभाग
जवाहरलाल नेहरू राजकीय महाविद्यालय
श्रीविजयपुरम, अंडमान निकोबार

भारतीय समाज विविधता से परिपूर्ण है, जहाँ विभिन्न धर्म, संस्कृति, जातियाँ तथा भाषाएँ सह-अस्तित्व में हैं। इसी सामाजिक संरचना में एक ऐसा समुदाय भी विद्यमान है, जिसे युगों से हाशिए पर रखा गया है— **किन्नर समुदाय**। यह समुदाय न तो पूर्णतः पुरुष है, न ही स्त्री; बल्कि यह एक ऐसे तीसरे लिंग का प्रतिनिधित्व करता है, जिसे समाज ने लंबे समय तक नकारा, अपमानित किया और मुख्यधारा से अलग रखा। "किन्नर" शब्द का प्रयोग उन व्यक्तियों के लिए किया जाता है, जिनकी लिंग पहचान पारंपरिक पुरुष या स्त्री की परिभाषा में नहीं आती। इनकी पहचान एक 'तृतीय लिंग' के रूप में होती है। प्राचीन भारतीय ग्रंथों में "किन्नर" शब्द का उल्लेख एक अलौकिक प्राणी या गंधर्व के रूप में मिलता है, जो संगीत और नृत्य में पारंगत होते थे। महाभारत और रामायण जैसे महाकाव्यों में किन्नरों का उल्लेख अनेक स्थानों पर हुआ है। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन काल में किन्नरों को सम्मान प्राप्त था, परंतु कालांतर में सामाजिक सोच में गिरावट आने लगी और यह समुदाय उपेक्षा व तिरस्कार का पात्र बन गया। भारतीय संविधान ने भी अब इस समुदाय को विधिक मान्यता प्रदान की है। भारतीय उच्चतम न्यायालय ने वर्ष 2014 में एक ऐतिहासिक निर्णय के माध्यम से किन्नरों को "थर्ड जेंडर" के रूप में मान्यता दी, जिससे इन्हें भी शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य तथा अन्य मूलभूत अधिकार प्राप्त हो सके। निःसंदेह हमारी सरकार और संविधान ने इन्हें थर्ड जेंडर के रूप में मान्यता दे दी है ताकि इनको वो समस्त मूलभूत अधिकार प्राप्त हो सकें जिससे इनका जीवन भी देश के एक आम नागरिक की भांति हो सके और ये भी अपने जीवन को भेदभाव रहित जी सकें। किन्तु वास्तविकता इससे अलग है और आज भी हमारे समाज में किन्नर वर्ग का एक बहुत बड़ा हिस्सा रोजगार की तलाश में और सुविधाओं के अभाव में अपने जीवन को नारकीय कर रहा है।

तृतीयलिंगी समुदाय में सबसे बड़ी समस्या बेरोजगारी की है। इसके पीछे समाज की रूढ़िवादी मानसिकता है। क्योंकि बचपन में परिवार के सदस्य इन्हें बेघर कर देते हैं इसके उपरांत समाज में कोई भी इन्हें रोजगार के नाम पर किसी भी प्रकार का कोई काम नहीं मिलता जिसके चलते इन्हें अपनी भूख मिटाने के लिए दर-दर की ठोकें खानी पड़ती हैं। निर्मला भुराड़िया के उपन्यास 'गुलाम मंडी' में ऐसे ही एक संदर्भ का उल्लेख किया गया है जिसमें उपन्यास की पात्र अंगूरी, जोकि तृतीयलिंगी है परिवार में प्रताड़ित होने की वजह से घर से भाग जाती है किंतु घर से भागने के उपरांत उसे कई दिनों तक स्वयं को भूखा रखना पड़ा क्योंकि न तो उसके पास पैसे थे और ना ही कोई उसे तृतीयलिंगी होने की वजह से काम देता था। उपन्यास में अंगूरी ने अपनी व्यथा को इस प्रकार वर्णित किया है- **"मैं घर से भाग गयी पर भूखी मर गयी, कोई काम भी नहीं देता था। लोगों के घर बर्तन मँजने गयी तो बोले, हिजड़ों से बर्तन मँजवाएंगे क्या?"** इनके बेरोजगार होने में जितनी भूमिका समाज और परिवार की है उतनी ही प्रशासन की भी है। ऐसा तृतीयलिंगी समाज का मानना है। इसके पीछे उनका तर्क है कि यदि प्रशासन चाहे तो तृतीयलिंगी समुदाय के उत्थान के लिए प्रशासन एक

मुहिम चला सकती है जैसा कि वह कुछ तथाकथित जातियों के लिए चलाती है ताकि तृतीयलिंगी समाज भी रोजगार प्राप्त कर विकास की मुख्य भूमिका में आ सके। किंतु विद्यालयों से लगाकर सरकारी पदों तक इनकी कोई भूमिका नहीं है। नीरजा माधव कृत 'यमदीप' उपन्यास में ऐसा ही एक संदर्भ दिया गया है। जिसमें उपन्यास के मुख्य तृतीयलिंगी पात्र महताब गुरु तृतीयलिंगियों के बेरोजगार होकर दर-दर भटकने से दखी हैं और वह नाजबीबी को लेने आये उसके माता-पिता से इस प्रकार अपना दुख प्रकट करते हैं- **"यह आप नहीं आपका प्रेम बोल रहा है, माता जी। किसी स्कूल में आज तक किसी हिजड़ा को पढ़ते-लिखते देखा है? किसी करसी पर हिजड़ा बैठा है? पुलिस में, मास्टरी में, कलेक्टरी में,....किसी में भी?अरे इसकी दुनिया यही है, माता जी.....कोई आगे नहीं आयेगा कि हिजड़ों को पढ़ाओ, लिखाओ, नौकरी दो, जैसे कुछ जातियों के लिए सरकार कर रही है। हमारे लिए तो वो भी नहीं।"** बेरोजगारी के चलते तृतीयलिंगी समुदाय मजबूर हो जाता है सड़कों पर ताली पीटने के लिए और भीख मांगने के लिए क्योंकि समाज जब इन्हें कोई काम नहीं देता तब ऐसी स्थिति में इनकी भूख इनसे ये सब करवाने के लिए बाध्य कर देती है। समाज का हर व्यक्ति चाहता है कि वह इज्जत के साथ रहे और उसे जरूरत की हर वस्तु मिल जाए। न उसे खाने की समस्या हो और न ही पहनने और रहने की। किंतु जब परिवार और समाज से बेदखल कर छोड़ दिया जाता है इन्हें अपने हाल पर तब पेट की भूख इनसे भीख तक मंगवा लेती है। पारू मदन नाईक के उपन्यास 'मैं क्यों नहीं' में उपन्यास की प्रमुख तृतीयलिंगी पात्र नाज अपनी माँ से बताती है कि समाज जिन तृतीयलिंगियों की भीड़ को ताली पीटते हुए सड़कों पर देखता है वह अपनी इच्छा से ऐसा नहीं करते, बल्कि उनकी मजबूरी है क्योंकि भूख तो उनको भी लगती है। नाज ने उपन्यास में बेरोजगारी की मार झेल रहे तृतीयलिंगियों की मजबूरी का उल्लेख अपनी माँ से इस प्रकार किया है- **"बीच सड़क पर तालियाँ पीटकर लोगों को रोकने वाली हमारी टोलियाँ आपको दिखाई देती हैं, पर क्या किसी ने सोचा है कि वे ऐसा क्यों करते हैं? माँ, जिस परमेश्वर ने ऐसा जन्म दिया, उसे कम से कम हमारी भूख निकाल लेनी चाहिए थी। पापी पेट के लिए सड़कों पर की जाने वाली ये धिनौनी हरकतें तो थम जातीं। माँ, हम सच में बदलने का प्रयास करते हैं, लेकिन वहाँ भी हमारा मखौल ही उड़ाया जाता है। ना घर का, ना घाट का। जाएँ तो कहाँ जाएँ?"** प्रदीप सौरभ कृत 'तीसरी ताली' उपन्यास में भी ऐसा ही एक संदर्भ देखने को मिलता है जिसमें उपन्यास की तृतीयलिंगी पात्र कला मौसी बुढ़ापे और बेरोजगारी के चलते दर-दर भीख मांगती हुई नजर आती है जिससे अन्य तृतीयलिंगी मौसी को इस तरह समझाते हुए नजर आते हैं- **"उसने कई बार कला मौसी को समझाया, अपने इलाके में नाच-गाकर पैसे कमा। भिखारियों की तरह सिग्नल पर क्या भीख मांगती है! अपने साथ हम सब की इज्जत का भी कचरा करती रहती है।"** इसी उपन्यास में तृतीयलिंगी पात्र सुनयना और पिंकी को

जब कहीं कोई काम नहीं मिल पा रहा था तब वे दोनों कला मौसी के पास गयीं ताकि कुछ मदद हो सके। किंतु कला मौसी खुद ही भीख मांग कर अपना गुजारा कर रही थी और उसने सुनयना और पिकी को भी भीख मांग कर गुजर-बसर करने की सलाह दी। उपन्यास में इस संदर्भ का उल्लेख इस प्रकार किया गया है- **“उन्होंने कहा कि ज्यादा ही परेशानी है तो तुम भी हमारे साथ सिग्नल पर खड़ी हो जाओ। इतने पैसे तो कार वाले दे ही जाते हैं कि तुम लोगों का पेट पल जाए। सिग्नल पर नहीं खड़ा होना है तो मार्केट ताली ठोक-ठाककर दकानदारों से वसूली कर लो। मरता क्या न करता! दोनों मौसी के साथ सिग्नल पर खड़े हो गये।”** तृतीयलिंगी समुदाय के पास जीविकोपार्जन का मुख्य साधन इनका परंपरागत पेशा ही माना गया है। जिसे यह एक धार्मिक रूढ़िवादिता के चलते, कि भगवान राम ने उन्हें ऐसा करने का आशीष दिया है समझकर करते हैं। इसके अंतर्गत तृतीयलिंगी समुदाय अपने सहयोगियों के साथ उस घर में जाते हैं जहाँ किसी नवजात शिशु का जन्म हुआ होता है या फिर वहाँ किसी कार्यक्रम का आयोजन हो रहा होता है। ऐसे घरों में जाकर ये नाच-गाना करते हैं और नवजात शिशु को अपना आशीष देते हैं और बदले में उस घर के सदस्यों से अपने लिए धन की मांग करते हैं। इस कार्य को ये लोग बधाई के रूप में करते हैं। कभी-कभी इन्हें अपने इस कार्य में आसानी से धन की प्राप्ति हो जाती है किंतु अधिकतर मामलों में इन्हें घर के सदस्यों से धन प्राप्त करने में काफी मशक्कत करनी पड़ती है और कभी-कभी तो बहुत मशक्कत के बाद भी इनको खाली हाथ ही लौटना पड़ता है। प्रदीप सौरभ कृत ‘तीसरी ताली’ में ऐसा ही एक संदर्भ देखने को मिलता है जिसमें उपन्यास के पात्र गौतम साहब के यहाँ बच्चे का जन्म होता है और यह खबर तृतीयलिंगी समुदाय को प्राप्त हो जाती है। तृतीयलिंगी समुदाय अपने पेशे के मुताबिक गौतम साहब के घर पहुंचकर नाच-गाना करते हैं और बदले में धन की मांग करते हैं। किंतु गौतम साहब अपने घर से नहीं निकले। गौतम साहब के इस व्यवहार से नाराज तृतीयलिंगी समुदाय ने उन्हें कुछ अपशब्द भी कहे ताकि वो बाहर आकर उन्हें कुछ दे सकें। उपन्यास में इस घटना का उल्लेख लेखक ने इस प्रकार किया है- **“गौतम साहब, लल्ला हुआ है और गरमी में रजाई ओढ़कर बैठे हो! सुंदरी ने ताली ठोककर दरवाजा जोर से भड़भड़ाया। सुंदरी की ताल में ताल मिलाते हुए बिदिया बढ़ा देते हुए कडुवाहट के साथ बोली, हिजड़ों को शगन नहीं दोगे तो लल्ला हिजड़ा निकलेगा। फिर भी अंदर से कोई सुगबुगाहट नहीं हुई, तो मण्डली की सरगना डिम्पल और उसके साथी सुर में सुर मिलाकर लगभग चिल्लाने के अंदाज में बोलने लगे, गौतम का बच्चा हाय-हाय....।”** ऐसा ही एक और संदर्भ सुभाष अखिल कृत ‘दरमियाना’ उपन्यास में भी देखने को मिलता है। जिसमें उपन्यास की मुख्य तृतीयलिंगी पात्र तारा और उसके सहयोगी एक ऐसे घर में नाच-गाना कर पैसे की मांग कर रहे थे जिस घर में बच्चे का जन्म हुआ होता है। उपन्यास में आँसू ने इस घटना का उल्लेख इस प्रकार किया है- **“न-री-न! इक्यावन से कम नहीं लूँगी, हाँ! पहला लडका होया है- और वो भी चाँद सा। एक दूसरे दरमियाने ने ताली दे मारी, खुदा करे, हमरी उमर भी इसे लग जाये.... बुरी नजर बाल भी न छू सके इसका।”** इसी उपन्यास में ऐसे ही एक और संदर्भ का जिक्र किया गया है। जिसमें उपन्यास की तृतीयलिंगी पात्र सुनंदा और उसके साथी आँसू के किसी मित्र के घर बधाई लेने जाते हैं और वहाँ नाच-गाना कर अपनी बधाई मांगते हैं। उपन्यास में आँसू ने इस घटना का उल्लेख इस प्रकार किया है- **“न री बहना! देख चाँद उतरा है तेरे आँगन में.....और मैंने कौन से ज्यादा माँग लिए तेरे से....पाँच सौ ही तो माँगे हैं। हमारे पास भी**

अंदाज!” जहाँ तृतीयलिंगी समाज के अधिकांश व्यक्ति अपने इस पेशे को बधाई के रूप में मानते हैं वहीं कुछेक तृतीयलिंगी इसे एक प्रकार की भीख समझते हैं। मजबूरी में इस पेशे को अपनाने वाले ऐसे तृतीयलिंगी व्यक्ति का तर्क है कि भूले ही हम इसे दूसरों को आशीष देते हुए मांगते हैं किंतु यह किसी भीख से कम नहीं। भगवत अनमोल कृत ‘जिंदगी 50 50’ उपन्यास में ऐसा ही एक संदर्भ उल्लिखित है। जिसमें उपन्यास की तृतीयलिंगी पात्र कस्तूरी मिलने आई अपने ही जैसी हर्षा को इस प्रकार अपने पेशे के बारे में बताती है- **“हाँ, का हमें भीख माँगे मा बड़ा नीक लागत है? तुमही बताओ भीख माँगना किसे नीक लागत है? हाँ, हम अपने दिलासा के लिए इसे नेग और आशीर्वाद के नाम पर पैसे माँगते हैं पर है तो एक तरह का भीख ही!”** तृतीयलिंगियों द्वारा बधाई व नाच-गाना वाले पेशे को अपनाने जाने को ही अपनी नियति माने जाने का एक संदर्भ महेन्द्र भीष्म कृत ‘मैं पायल’ उपन्यास में देखने को मिलता है। जिसमें उपन्यास की तृतीयलिंगी पात्र पायल को जब कुछ तृतीयलिंगी पकड़ कर अपने समुदाय में ले जाते हैं तब उनकी गुरु पायल के द्वारा इस पेशे को अपनाने से मना करने पर समझाती हैं और कहती हैं कि यही पेशा हमारी नियति है और तुम्हें भी यही करना होगा। उपन्यास में इस घटना का उल्लेख पायल ने इस प्रकार से किया है- **“गुरूमाई मेरी पीठ सहलाते हुए बोली, देख बेटा! हम हिजड़ों की यही नियति है....दसरो के सुख में, खुशी में सम्मिलित हो बधाई गाना-बजाना और उनसे इनाम-बख्शीश पाना। रिया! इसे ले जाओ नहलाओ-धलाओ, अच्छा खाना-पीना करो। जाओ बेटा! इन लोगों के साथ, जैसा ये कहें वैसा करो।”** तृतीयलिंगी समुदाय के अधिकांश व्यक्ति अपने जीवन-यापन के लिए वैश्यावृत्ति का रास्ता अपना लेते हैं। इसके पीछे समाज का इनके प्रति तिरस्कार पूर्ण रवैया है जिसके चलते इन्हें कहीं काम नहीं मिलता और जिसके परिणामस्वरूप इन्हें गरीबी और भुखमरी का सामना करना पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में इन्हें वैश्यावृत्ति का रास्ता चुनना पड़ता है। आर्थिक तंगी के चलते इन्हें अपने जीवन-यापन के लिए मूलभूत जरूरतों को पूरा करने में समस्या का सामना करना पड़ता है। जैसे भोजन, रहने के लिए उचित स्थान, स्वास्थ्य संबंधी जरूरतें इत्यादि की पूर्ति हेतु इन्हें दर-दर भटकना पड़ता है। जिसके चलते इनके पास कोई अन्य विकल्प शेष नहीं बचता और अंततः मजबूर होकर वैश्यावृत्ति का सहारा लेना पड़ता है। प्रदीप सौरभ कृत ‘तीसरी ताली’ उपन्यास में ऐसा ही संदर्भ दिया गया है जिसमें बताया गया है कि वैश्विक बाजार में मंदी की वजह से भारत में वैश्यावृत्ति का धंधा भी धीमा हो गया था और अब ग्राहक लड़कियों की जगह तृतीयलिंगियों और लड़कों के साथ संबंध बना रहे थे। क्योंकि लड़कियों की तुलना में तृतीयलिंगी और लड़के कम दाम में उपलब्ध हो जाते थे और तृतीयलिंगी समुदाय के व्यक्ति की जरूरतें भी उन्हें इस धंधे की ओर खींच रही थीं और कम पैसे में भी इन्हें वैश्यावृत्ति करने में कोई एतराज नहीं था। क्योंकि कम ही सही लेकिन पैसे तो मिल ही जाते थे जिससे ये अपनी जरूरतें पूरी कर सकते थे। उपन्यास में इस बात का उल्लेख इस प्रकार किया गया है- **“अब बाजार की हालत यह थी कि हर ग्राहक सस्ती लड़कियों की माँग करने लगा। लड़कियाँ न मिलें तो ऐसे ग्राहक हिजड़ों और लौण्डों से भी काम चलाने को तैयार थे।”** नीरजा माधव के उपन्यास ‘यमदीप’ में महताब गुरु ने अपने चेलों को गिरिया रखने की खुली आजादी दे दी क्योंकि वे नहीं चाहते कि उनके समुदाय का कोई भी व्यक्ति रोग-ग्रस्त हो। क्योंकि आर्थिक तंगी के चलते उनके तृतीयलिंगी शिष्य अप्राकृतिक यौन संबंध बना रहे थे। जिससे उनमें एड्स जैसी भयंकर यौन बीमारी फैलने का खतरा था। उपन्यास में इसका उल्लेख इस प्रकार किया गया है- **“पैसों के अभाव में अपने चेलों को दुष्कर्म में लिप्त देख उनकी चिंता बढ़ गई तो उन्होंने**

कम से कम एक व्यक्ति के साथ बंधकर उनका जीवन रोग-ग्रस्त तो नहीं होगा।”¹² किन्नर कथा के लेखक महेन्द्र भीष्म ने ऐसे तृतीयलिंगियों का वैश्यावृत्ति कार्य करते हुए चित्रण किया है जो नकली हैं और गरीबी और भुखमरी के चलते इस कार्य को करने के लिए मजबूर हैं। कलेक्टर आयुष और पुलिस अधीक्षक निखिल ने जब इन नकली तृतीयलिंगियों को ट्रक ड्राइवर्स के साथ वैश्यावृत्ति के लिए सौदा करते हुए पकड़ा और पछताछ शुरू की तो डर के मारे इन नकली तृतीयलिंगियों ने सारा सच तुरंत ही उगल दिया और अपनी गरीबी और कहीं काम न मिलने की लाचारी वाली बात भी बतायी। जिसका उल्लेख उपन्यास में इस प्रकार किया गया है- “**जी हुजूर मैं रहमान हूँ, गांव में स्वांग मंडली के साथ नाचने-गाने का काम करता हूँ, दो रोज पहले अब्दुल भाई मुझे छतरपुर लेकर आये थे। मेरे बाप ने गरीबी से तंग आकर खुदकुशी कर ली थी हुजूर! तीन छोटी बहनें हैं, बूढ़ी माँ है हुजूर, गांव में कोई काम मांगने पर कोई काम नहीं देता। स्वांग वाला, खसुआ, जनखा, हिजड़ा कहकर टरका दिया जाता है। ताने मारते और हँसते-छेड़ते हैं मुझे। छह दिन से घर में चूल्हा नहीं जला। हुजूर! भूखों मरने की नौबत आ गयी है। मांग-मंग कर दूसरों की दया पर जी रहे हैं हुजूर! भला हो अब्दुल भाई का। उन्होंने लंबे हिजड़े से मिलवा दिया। दो दिन में तीन सौ कमा लिए हुजूर। सोचा था कल सुबह गांव चला जाऊंगा। माँ और बहनों को खिलाकर ही कुछ खाने की कसम खाई थी हुजूर, सच कह रहा हूँ, खुदा कसम।”¹³**

सर्वविदित है कि भारत सरकार द्वारा "ट्रांसजेंडर व्यक्ति (अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 2019" लागू किया गया, जिसका उद्देश्य इस समुदाय के अधिकारों की रक्षा करना और उन्हें सामाजिक न्याय प्रदान करना है और कई राज्य सरकारों भी किन्नरों के लिए आरक्षण, रोजगार प्रशिक्षण, एवं स्वास्थ्य सेवाओं की योजनाएँ चला रही हैं। इसके अतिरिक्त, विभिन्न सामाजिक संगठनों तथा जागरूक नागरिकों द्वारा भी इस समुदाय को मुख्यधारा में लाने के लिए सतत प्रयास किए जा रहे हैं। किन्तु आज भी किन्नर समुदाय को समाज में सम्मानजनक स्थान प्राप्त नहीं है। इन्हें शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं, एवं नौकरी के अवसरों से प्रायः वंचित रखा जाता है। अधिकांश किन्नर मजबूरीवश भीख माँगने, बर्धाई देने या यौन व्यापार जैसे कार्यों में संलग्न होते हैं। समाज का एक बड़ा वर्ग इन्हें हेय दृष्टि से देखता है, जिससे इनकी आत्म-गरिमा और सम्मान को ठेस पहुँचती है। इसलिए यह सहर्ष स्वीकार करना होगा कि किन्नर समुदाय भी हमारे समाज का अभिन्न अंग है। उन्हें तिरस्कार नहीं, सम्मान की आवश्यकता है। जब तक हम अपनी सोच में परिवर्तन नहीं लाएँगे, तब तक कोई भी विधिक प्रावधान उन्हें वास्तविक गरिमा प्रदान नहीं कर सकेगा। प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार, सम्मान और अवसर मिलना चाहिए, चाहे वह किसी भी लिंग से संबंधित क्यों न हो। समाज तभी पूर्ण होगा जब उसमें हर वर्ग को समुचित स्थान मिलेगा और यही एक समावेशी और न्यायपूर्ण भारत की पहचान होगी।

सन्दर्भ सूची:-

1. गुलाम मंडी, पृ. - 71
2. यमदीप पृ. - 94
3. मैं क्यों नहीं, पृ. - 87
4. तीसरी ताली, पृ.- 14
5. वही, पृ.- 170
6. वही, पृ.- 11
7. दरमियाना पृ.- 14
8. वही, पृ.- 65
9. जिन्दगी 50-50, पृ.- 139

नहर में बहती लाशें” में समाज की वर्गीय संरचना

उमा बणिचुल

शोधार्थी

हिंदी विभाग विश्वविद्यालय -हैदराबाद

साहित्य समाज का दर्पण होता है। अर्थात् सामाजिक प्राणी मानव के जीवन से संबोधित समस्त विषय साहित्य में समाहित होते हैं। राजू शर्मा द्वारा समाज के विभिन्न वर्गों से संबंध रखने वाले ग्रामीण व नगरीय परिवेश में रहकर जीवन यापन करने वाले मानव के जीवन के विविध रूपों को अपनी कथावस्तु का आधार बनाया।

लेखक राजू शर्मा द्वारा उच्च, मध्य व निम्न वर्गों में विभाजित भारतीय समाज को प्रमुख रूप से अपनी कृतियों का विषय बनाया।

समाज की वर्गीय संरचना:-व्यक्तियों का समूह ही समाज है। समाज से संबंध रखने वाले को सामाजिक कहा जाता है। सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत तीन वर्ग को देखने को मिलते हैं यथा- उच्च वर्ग, मध्य वर्ग एवं निम्न वर्ग।

उच्च वर्ग :- उच्च वर्ग को धानाढ्य वर्ग भी कह सकते हैं। इस वर्ग का उदय उद्योग विकास के साथ जुड़ा हुआ है। इस वर्ग का प्रभुत्व समाज की आर्थिक सत्ता पर निर्भर है। जमींदार, पूँजीपति, साहूकार, व्यापारी, उद्योगपति आदि इस वर्ग में आते हैं। शासन का संचालन इसी वर्ग द्वारा होता है। पूँजीपतियों द्वारा मध्य वर्ग एवं निम्न वर्ग का शोषण कर उच्च वर्ग का ताज पहना जाता है।

मध्य वर्ग :- उच्च वर्ग और निम्न वर्ग के बीच जो वर्ग आता है उसे मध्य वर्ग कहा जाता है। क्लर्क, सरकारी अफसर, वकील, डॉक्टर, छोटे व्यापारी आदि इस वर्ग में आते हैं। इस वर्ग के लोग उच्चाभिलाषी होते हैं। कम आय में बहुत कुछ करने का सपना देखते हैं, अतः उनका दैनिक जीवन अभिलाषाओं की पूर्ति करने के कारण कष्टमय होता है।

निम्न वर्ग:- निम्न वर्ग की आय कोई निश्चितता नहीं होती, ऐसे व्यक्ति इस वर्ग में आते हैं। जैसे श्रमिक, मजदूर, कुली, नौकर, छोटे किसान, रिकशावाला आदि। इस वर्ग की यह विशिष्टता है कि श्रम दान करके उच्च वर्ग की सेवा करना इनका प्रमुख कर्तव्य होता है। खुद को भूखा रखकर उच्च वर्ग को छप्पन भोग प्रधान करना तथा सड़क एवं झोपड़ी में जीवन यापन करते हुए उच्च वर्ग को आलीशान महल प्रदान करने इस वर्ग की पूरी जिंदगी लग जाती है।

राजू शर्मा के काहानी संग्रह 'नहर में बहती लाशें' में एक प्रमुख कहानी 'नहर में बहती लाशें' भी है। इस कहानी का मुख्य पात्र श्यामल है। जिसके माध्यम से कहानीकार ने मध्यवर्ग को प्रतिबिंबित किया है। श्यामल घोष पन्द्रह साल अमेरिका में रहा तत्पश्चात भारत लौटा। उसके पिताजी का नाम अरविन्द घोष एवं माताजी का नाम कमलनयनी घोष था। पिता के नहीं रहने के कारण माताजी के साथ बडौदा में रहता था। श्यामल घोष एक फोटो जर्नलिस्ट था इसलिए अपने घर की पहली मंजिल पर उसने स्टूडियो बना रखा था। एक दिन उसके हाथ एक मनोग्राफ लगा। मनोग्राफ का शीर्षक था- 'द मैजिक ऑफ भाखडा नांगल अ पर्सनल मेमुआर'। मनोग्राफ श्यामल के जेहन में निरन्तर दस्तक देता रहा। श्यामल का विचार भाखडा नांगल पर एक फोटो फीचर बनाने का था। जिसके विषय में कहा गया है- "श्यामल के मन में जिद पैदा की। उसकी योजना का आकार निरन्तर करवट लेता फोटो फीचर के साथ वृत्तचित्र क्यों नहीं? एक छोटी फिल्म भी हो सकती है। डिजिटल टेक्नोलॉजी में खर्चा बहुत नहीं है। पैसा जुटा सकता है।" इससे स्पष्ट होता है कि श्यामल घोष कुछ करना तो चाहता है परंतु पैसों की